Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2018 GISRRJ | Volume 1 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

लखीमपुर–खीरी जनपद की थारु जनजाति का सामाजिक व सांस्कृतिक अध्ययन

डा0 नूतन सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास युवराजदत्त महाविद्यालय लखीमपुर खीरी

प्रस्तावना– थारु जनजाति भारत की सर्वाधिक जानी जाने वाली जनजाति है। ये भारत नेपाल के सीमावर्ती क्षेत्र में निवास करते हैं। भारत सरकार द्वारा विभिन्न सुविधाओं के दिए जाने के बावजूद थारु जनजाति अपने अधिकारों एवं सामाजिक सुरक्षा हेतु अभी भी संघर्षरत है। जंगलों के मूल निवासी होने के कारण यह वर्ग एवं इनकी संस्कृति का प्रकृति से बेहद जुड़ाव है। इनके रहन–सहन, भोजन, वस्त्र, कलायें, धर्म एवं धार्मिक क्रियाविधियां पारिस्थितिकी से गहरे रूप से जुडी हैं। हमें इनको मुख्य धारा में लाने के साथ–साथ इनकी संस्कृति को भी संरक्षित करना होगा। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य थारू संस्कृति का प्रचार–प्रसार एवं संरक्षण है।

मुख्य शब्द– लखीमपुर, खीरी, जनपद, थारु, जनजाति, भारत, संस्कृति,संरक्षण।

परिचय–थारु जनजाति की उत्पत्ति के विषय में विभिन्न मान्यताएँ हैं। कुछ विद्वानों ने थारुओं को मंगोल प्रजाति से तथा कुछ ने मंगोल द्रविड़ प्रजाति से सम्बंधित माना है। नृवंश विद उनके चहरे मोहरे को मंगोल के समान ठहराते हैं तथा मानते हैं कि उनके पूर्वज मंगोल रहे। थारू अपनी उत्पत्ति राजस्थान के राजसी मूल से होने का दावा करती है। मध्य नेपाल के तराई में रहने वाले इस जनजाति के लोग खुद को तराई के मूल निवासी और गौतम बुद्ध के वंशज होने का दावा करते हैं। एक अन्य मान्यता के अनुसार पश्चिमी नेपाल में निवास करने वाले राणा थारु, भारतीय राजपूतों के वंशज होने का दावा करती है। थारु नाम की उत्पत्ति के बारे में कुछ विद्वानों का मत है कि ये लोग राजपूताना के थार मरुस्थल से हैं। इनका मानना है कि 16 वीं शताब्दी में इनके पूर्वज जंगल में चले गए थे। भारत की कुल अनुसूचित जनजातियों की संख्या का 1.09 % उत्तर प्रदेश में पायी जाती है। थारुओं की कुल संख्या 105291 है।

थारु शब्द की उत्पत्ति –नेपाली शब्द 'थारू' तराई में एक विशेष जाति का नाम है। ऐसी मान्यता है कि थारु शब्द स्थवीर से लिया गया है। जिसका अर्थ है थेरवाद या स्थिर वाद, अर्थात बौद्ध धर्म का अनुयायी। यह भी संभव है कि थारु शब्द कीउत्पत्ति तिब्बती शास्त्रीय शब्द mtha–ru'I brgyd से हुई हो जिसका अर्थ है सीमा पर देश। इस शब्द का उल्लेख तिब्बती विद्वान तारानाथ ने अपनी पुस्तक में किया है।

थारुओं का निवास क्षेत्र–थारु जाति का आवास क्षेत्र तराई प्रदेश के पश्चिमी भाग में जिला नैनीताल व उत्तर प्रदेश के दक्षिण पूर्व से लेकर पूर्व में गोरखपुर व नेपाल सीमा तक है। यह क्षेत्र हिमालय पर्वत एवं शिवालिक क्षेत्र में नैनीताल, गोंडा, खीरी, गोरखपुर, पीलीभीत, बहराइच एवं बस्ती जिलों में विस्तृत है। थारु जाति का सबसे अधिक जमाव नैनीताल जिले के बिलहारी परगना, खातीमाता तहसील की नानकमत्ता विल्पुरी एवं टनकपुर बस्तियों के आस–पास पाया जाता है। थारु जनजाति का विस्तार बिहार के चंपारण, उत्तराखंड के नैनीताल, उधमसिंहनगर जनपद, उत्तर प्रदेश में गोरखपुर एवं तराई क्षेत्र लखीमपुर–खीरी में निवास करते हैं। लखीमपुर खीरी जनपद के दुधवा राष्ट्रीय पार्क के 15 किलोमीटर के बाद थारुओं के गाँव आ जाते हैं जो बहुतायत में हैं।

थारु जनजाति की विशेषता–थारु जनजाति को सन 1967 में भारत सरकार द्वारा जनजाति का दर्जा दिया गया था। थारु जनजाति के अंतर्गत 7 उपसमूह आते हैं। राणा, थारु, बुक्सा, गडौरा, गिरनामा, जुगिया, दुगौरा, सुषा एवं पसिया। यहाँ के थारु स्वयं को थार भूमि का निवासी मानते हैं। थारु जनजाति के लोगों ने उधमसिंहनगर में अपने

राजाओं के नाम पर 12 गांवों को बसाया था। आजादी से पूर्व 1950–1955 तक समाज में थारु शब्द के स्थान पर 'थरुआ' एवं 'थारुनिया' शब्द का योग किया जाता था।

थारुओं का धर्म–इनका आध्यात्मिक विश्वास एवं नैतिक मूल प्राकृतिक वातावरण से निकटता से जुड़ा हुआ है। थारु मुख्य रूप से हिंदू धर्म को मानते हैं, हिंदू देवी देवताओं की पूजा करते हैं तथा हिंदू त्योहारों को मनाते हैं। यद्यपि कुछ थारु बौद्धधर्म को मानते हैं।

थारुओं के कुल देवता भगवान शिव हैं। ये समुदाय शिव को महादेव के रूप में पूजते हैं। थारू अपने उपनाम में नारायण शब्द का प्रयोग करते हैं। उनकी मान्यता है कि नारायण धूप बारिश एवं फसलों के दाता हैं।

थारुओं की भाषा–थारुओं की मातृ भाषा थारु है। इसके अतिरिक्त नेपाली भाषा भी बोलते हैं। कुछ थारु भोजपुरी, मैथिली व अवधी जैसी क्षेत्रीय भाषाएँ भी बोलते हैं।

उपनाम–राणा, कठारिया, चौधरी इनके उपनाम होते हैं।

थारुओं की संस्कृति–टर्नर के मतानुसार 1931 में थारू दो अर्धांशों में बंटा था। जिनमे से प्रत्येक के 6 गोत्र होते थे। पूर्व में उच्च अर्धांशों में निम्न अर्धांशों की कन्या का विवाह संभव था किन्तु बाद में दोनों अर्धांश अन्तर विवाही हो गए।

विवाह पद्धति –थारु समाज में 'काज' व 'डोला' पद्धति से विवाह होता था। 'काज' अर्थात वधूमूल्य, डोला अर्थात कन्या अपहरण। परन्तु अब समय के परिवर्तन के साथ इनके स्थान पर संस्कारिक विवाह होने लगे हैं। थारु समाज में दिखाई को 'दिखनौरी' और गौने की रस्म को 'चाला' कहते हैं। थारू समाज के लोग सगोत्र विवाह कर लेते हैं। थारु समाज में जब रिश्ता पक्का होता है तो उसे 'पक्की पोधी' कहा जाता है। विवाह के पूर्व की रीतियों में विवाह से एक दिन पूर्व भूइयां पूजा होती है। इनका विवाह 2 से 3 दिन में सम्पन्न होता है। विवाह की रस्में सम्पन्न होने के बाद महिलायें वर के घर जाती हैं जिसे 'ढाअइया' कहा जाता है। इनमें विधवा विवाह का भी चलन है। विधवा स्त्री अविवाहित पुरुष से विवाह कर सकती है।

वेष–भूषा एवं आभूषण–मानव सभ्यता के विकासक्रम में मनुष्य ने तन ढकने के साथ साथ सौन्दर्य का भी विकास किया। उसी प्रकार थारू समुदाय भी वस्त्र एवं आभूषणों की दृष्टि से एक अलग तस्वीर प्रस्तुत करता है। मुख्य धारा से जुड़ने के क्रम में अब थारु समाज अपने परम्परागत वस्त्र आभूषणों को खास पर्वों एवं अवसरों पर ही धारण कर रहा है। महिलायें 'घाघरा–चोली' जिन्हें क्षेत्रीय भाषा में 'अंगिया–घांघरिया' कहा जाता है, पहनती हैं। महिलायें सर से चुनरी डालती हैं। चुनरी को 'उनियां' कहा जाता है। इसके अतिरिक्त फुतई (कोटी), अरघना (सूती दुपट्टा), कुर्ती, झूला (ऊन से बना वस्त्र) इनके प्रमुख पारंपरिक परिधान हैं। पुरुषों द्वारा पहने जाने वाले पारंपरिक परिधानों में धोती कुर्ता, फुतई, झागिया (सफेद शेरवानी), टोपी , बनियान हैं।

थारुओं के अधिकांशतः चांदी के आभूषण बनाए जाते थे। साथ ही पीतल कांसा व ताबें के आभूषण भी प्रयुक्त होते थे। वांकडा, खडुआ, हसुलिया, पहुची, बाजूबंद, नक्फूल, लौंगी, साकर, बाली, मांग बेंदी. झांझर महिलाओं के आभूषण थे। पैरों में चांदी के 'पैड़ा' पहने जाते थे जिसका प्रचलन धीरे–धीरे कम होता जा रहा है। नाक के बीच में नकबेसर पहना जाता था जो सोने का बना होता था। महिलायें बालों का 'जूडा' बनाती हैं।

थारुओं का खानपान–थारु समुदाय के मानक पकवानों में 2 प्रमुख बगिया/टिकरी तथा घोंघी है। बगिया चावल के आटे का उबला हुआ पकवान है। अन्य पकवान में कतरा, मिसौला तथा फरा आते हैं। कतरा बेसन से बनाता है। मिसौला अर्थात मीठे चावल। इस चावल को भाप में पकाया जाता है। फरा चावल के आटे से बनाने वाला स्वादिष्ट पकवान है।

थारुओं के त्यौहार–थारु लोग अपनी संस्कृति का आनंद लेते हैं। दर्शन और विहार के अलावा थारु माघी, जितिया और अन्य त्योहारों को अपनी अपनी क्षमतानुसार धूमधाम से मनाते हैं। बिहार के पश्चिमी चंपारण के थारु बरना नामक त्यौहार मनाते है। इस त्यौहार की शुरुआत में वे लोग भव्य तरीके से पूजा–पाठ करते हैं और उसकी समाप्ति

पर परम्परागत गीत, नृत्य, संगीत होते है। इसके बाद 60 घंटे तक घरों से बाहर नहीं निकलते हैं। इनका मानना है कि इस दौरान बाहर निकलने और रोजमर्रा की गतिविधियों से नए पेड़–पौधों को नुकसान हो सकता है।

दुधवा टाइगर रिजर्व के आस–पास के दर्जनों गाँव में बसी आदिवासी जनजाति थारु क्षेत्र के त्योहारों के रंग और ढंग अलग ही देखने को मिलते हैं। ये होलिका दहन करने के बजाय उस स्थान पर घास–फूस के बनाए गए विशालकाय दानवों के पुतलों को जलाते हैं। होलिका दहन के दिन ग्राम के मुखिया जिसे 'पधना' कहा जाता है, दानवों को आग लगाते हैं। थारु क्षेत्र के बुजुर्गों की माने तो यहाँ दानव जलाने की परम्परा सदियों पुरानी है। पहले यह त्यौहार एक माह चलता था लेकिन अब इस त्यौहार को आटा दिन मनाया जाता है। होली को थारु लोग 'होरी' कहते हैं। होरी में फगवा मांगा जाता है। फगवा अर्थात शगुन के रुपये। होरी के दिन थारु अपनी पारंपरिक पोशाक में लोक नृत्य करते हैं। उसे भी 'होरी' कहा जाता है। होरी नृत्य में थारू स्त्रियाँ व पुरुष अपनी परम्परागत पोशाक पहन कर गोल घेरा बनाकर ढोलक, झांझ व मृदंग आदि वाद्ययंत्रों पर नृत्य करते है तथा घेरे के बीच में ढोल बजाने वाले और गीत गाने वाले लोग होते हैं। होरी के मौके पर थारू 'जांड' मदिरा पीते हैं तथा सिधारा मछली (सूखी मछली) खाते हैं। होरी के आठ दिन बाद ठठेरा/खकडेरा फोड़ने के बाद होली का समापन किया जाता है। ठठेरा में मिटटी की गोली को झाड़ू की सींकों में पिरोकर मिट्टी के घड़े के नीचे के टूटे भाग में 'सतनजा' के दाने रखकर मिट्टी का दिया जलाया जाता है। जिसे ठठेरा कहते हैं। सतनजा का मतलब है सात अनाज। इस ठठेरा को गाँव के दक्षिण दिशा में फोड़ा जाता है।

दिवाली–थारु जनजाति में दिवाली के त्यौहार को शोक के रूप में मनाया जाता है। इस दिन थारु अपने पूर्वजों की याद में शोक मनाते हैं। जिसे दिवारी कहते हैं। इस दिन वे अपने उन पूर्वजों को याद करते हैं जिनकी मृत्यु दिवारी से कुछ दिन पूर्व हुई हो। ये अपने स्वर्गवासी परिवार के सदस्य की याद में पुतला बनाते हैं तथा उसे दिवारी के दिन जलाते हैं। पुतला जलाने के बाद अपने रिश्तेदारों को अपने घर बुलाकर भोज कराते हैं। इस भोज को 'बड़ी रोटी' कहा जाता है।

आषाढ़ी पूजा–इस पूजा में गाँव के कुछ लोग पूरे गाँव से खाने की वस्तुएं जैसे आटा, तेल, नमक, चावल आदि माँगते हैं। फिर इन वस्तुओं को गाँव के पधना के घर जाकर रखते हैं। फिर पधना के घर ही पूड़ी, गुलगुला आदि खाद्य सामग्री बनाते हैं। पूजा के बाद ही ये सब पकवान खाया जाता है। आषाढी पूजा गाँव के बाहर 'भुईयां' में की जाती है। यह पूजा भुरभुरा के द्वारा की जाती है जो गाँव का धार्मिक अनुष्ठान करवाता है। भुइयां में गाँव के कुल देवता निवास करते हैं। जो गाँव को बुरी हवाओं से बचाते हैं। आषाढ़ी पूजा के दिन बनने वाले पकवान गाँव के लगभग प्रत्येक घर में बनाते हैं। घर की महिलायें 'कोला' नामक पूजा स्थल में पूजा करती हैं। यह कोला हर घर में बना होता है। आषाढ़ी पूजा विशेष परिस्थितियो में न करने का चलन है। जैसे जिन परिवारों या गोत्र (जिसे कुरमा कहते हैं) में किसी सदस्य की मृत्यु हुई हो उन परिवारों व कुटुंब में 3 वर्ष तक यहाँ पूजा नहीं की जाती है। यदि तीन साल के अन्दर फिर किसी की मृत्यु हो जाती है तो एक वर्ष और पूजा नहीं की जाती है।

तीज–तीज का त्यौहार सावन के महीने में मनाया जाता है। इसमें विवाहित महिलायें अपने पति के लिए उपवास रखती हैं। यह उपवास शाम को नदी के किनारे तोड़ा जाता है। महिलाए 'झुड़का' नामक घास की पत्तियों में अपने परिवार के सदस्य संख्या के बराबर गांठ बाँधती हैं जिसे झुड़की कहा जाता है। इस झुड़की को पूड़ी सेंवई का भोग लगाकर उस गांठ वाली पूरी पत्ती को तोड़कर नदी में बहा कर अपना व्रत तोड़ती हैं।

चराई–यह एक छोटा सा त्यौहार है। इसमे गाँव की महिलायें गाँव के बाहर जंगल के पास पूरा दिन बैठती हैं। तथा शाम को पूजा के पश्चात खाना खाती हैं। इस त्यौहार के पकवान हैं– मीठे चावल, उबले आलू की सब्जी और मछली सब्जी बनायी जाती है जिसे केले के पत्ते में खाया जाता था किन्तु अब इसका प्रचलन कम हो गया है। पूजा के पश्चात जामुन के पत्ते को 'भुइयां' में डाला जाता है। भूइयां गाँव के बाहर पूजा का स्थान।

व्यवसाय–जीवन यापन के लिए थारु मुख्य रूप से स्थानान्तरण खेती, जंगलों में मचाली पकड़ने एवं शिकार पर निर्भर हैं। यह जंगल, फल, सब्जियों पौधों एवं अन्य वन उत्पादों को जंगल से एकत्रित करके स्थानीय बाजारों में बेचते हैं। भारतीय आरक्षण व्यवस्था के अंतर्गत उन्हें अनुसूचित जनजाति के रूप में सूचीबद्ध किया जाता है।

कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएं –थारुओं के गाँव में 'भर्रा' होता है। भर्रा उसे कहते हैं जो गाँव के निवासियों को बुरी हवाओं से बचाता है। गाँव का मुखिया 'पधना' कहलाता है पधना का अर्थ है जिसके पूर्वजों ने गाँव को बसाया हो। थारुओं के मकान अक्सर कच्चे होते हैं जो मिटटी, लकड़ी और घास से बने होते हैं। मकान में एक पूजा घर भी होता है। जिसे 'कोला' कहा जाता है। कोला में मूर्ति नहीं होती है। कोला में कुल देवता निवास करते हैं।

धान की अच्छी पैदावार के लिए फसल में दूध का छिड़काव मक्के के छिलके से किया जाता है। अगर किसी का नया घर बना हो तो इस खुशी में दावत दी जाती है। उस दावत को भौंरा कहा जाता है। किसी भी विवाह से पूर्व गाँव की भूइयां की पूजा की जाती है। जब धान में बालियाँ आना शुरू होती हैं तो एक पूजा की जाती है, फिर जब धान काटने से पहले एक पूजा की जाती है। इस पूजा को 'पोया' कहा जाता है। पोया की पूजा में घर का मुखिया सुबह 4 बजे उड़द की दाल व चावल खाकर खेत में जाकर पूजा करता है फिर वहां से कुछ धान काटकर घर में लाता है, उस धान को घर की दीवार में रखा जाता है।

निष्कर्ष–निष्कर्षतः यह ज्ञात होता है कि सामाजिक जागरुकता, शिक्षा के विकास तथा अन्य समुदायों के साथ संपर्क के प्रभाव से थारु समाज के पारम्परिक रीति रिवाजों एवं जीवन शैली में परिवर्तन आया है।

....

संदर्भ सूची

1– मजूमदार, डी0एन0, (1958), रेसेज एंड कल्चर्स ऑफ इण्डिया, एशिया पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

2– मजूमदार डी0एन0, द थारुज एंड देयर ब्लड ग्रुप जर्नल आफ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, भाग –8, नं– 1.

3– जोशी, घनश्याम (2003), उत्तराखंड का राजनीतिक, सामाजिक, एवं सांस्कृतिक इतिहास, प्रकाश बुक डिपो, बरेली।

4– प्रधान, हरिदेव, 1932, बर्थ कस्टम एमंग द थारुज बाई मैन इन इंडिया।

5– प्रधान, हरिदेव, सोसल इकॉनमी इन तराई (द थारुज), जर्नल आफ यूनाइटेड प्रोविन्सेज हिस्टोरिकल सोसाइटी–10, 1937.

6– श्रीवास्तव, एस0के0, द थारुज : एस्टडी इन कल्चर डायनामिक्स, आगरा यूनिवर्सिटी प्रेस, 1958

7– गोविन्द, जे0पी0, द थारू आफ तराई एंड भाबर, इंडियन फोकलोर–2, 1959.

8– वर्मा, सुभाषचन्द्र, शोधपत्र, द एको–फ्रेंडली थारू ट्राइब : ए स्टडी इन सोसिओ कल्चरल डायनामिक्स, जर्नल आफ एशिया पैसिफिक स्टडी (2010), वाल.–1,नं–2, 177–187.

9– नूतन सिंह व धीरेन्द्र कुमार सिंह, थारूज एंड देयर इनहैंसमेन्ट इन माडर्न टाइम लखीमपुर खीरी डिस्टिक, शोधपत्र IJISSHR, Vol-2.-2,June-2015,ISSN-2349-1876|Online ISSN 2454-1826.pp-18-24

10– साक्षात्कार–सोनी राना, छात्रा, युवराजदत्त महाविदयालय लखीमपुर खीरी।

———————————————

.